'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक ५८ | वाराणसी, शनिवार, १६ मई, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

चंडीगढ़ (पंजाब) १-५-'५९

विज्ञान-युग में संस्कृति के आधार पर शिक्षा, उत्पादन और योजनाओं का गठन करना होगा

हमारे देश की अपनी एक सभ्यता है। यहाँ के लोगों का अपना एक तरीका है। लेकिन हमें समझना चाहिए कि इसके बावजूद भारत की हर चीज अच्छी ही है, ऐसी बात नहीं है। अपनी कुछ चीजें अच्छी हैं, कुछ बुरी। इसी प्रकार दूसरों के पास भी कुछ चीजें अच्छी हैं, कुछ बुरी। हमें हर अच्छी चीज का संग्रह करना चाहिए। गुणग्राही बनना ही हमारे जीवन का तरीका होना चाहिए। अवगुणों से चिपके रहना ठीक नहीं है।

प्रकृति, विकृति, संस्कृति

जीवन में तीन चीजें होती हैं—प्रकृति, विकृति और संस्कृति। भूख लगने पर खाना प्रकृति है, जरूरत से ज्यादा खा लेना विकृति है और भूख लगनेपर भी सामने आये हुए भूखे अतिथि को अपना खाना खिला देना संस्कृति है। दूसरों की संतुष्टि के लिए अपने भोजन को स्वेच्छापूर्वक प्रसन्न मन से त्याग देना सर्वोत्तम त है। अनाज खाना प्रकृति है। फलाहार करना संस्कृति है और फलों की शराब बनाकर पीना विकृति है। कई बार हम विकृति को ही संस्कृति मान लेने की भूल करते हैं। जरूरत न होने पर भी किसी को आग्रह करके ज्यादा खिलाने में संस्कृति नहीं, विकृति है। लोग उसे संस्कृति समझते हैं। जैसे-जैसे विज्ञान की तरक्की होगी, वैसे-वैसे विकृति क्षीण होगी और संस्कृति बढ़ेगी।

मेरे पेट में लड्डू हजम करने की क्षमता नहीं है, फिर भी मित्र लोग अगर आग्रह से मुझे लड्डू खिलाते जायँ तो सभी दर्शक समझेंगे कि यह प्रेम का दर्शन है। लेकिन सच तो यह है कि वह प्रेम नहीं, दुश्मनी है। देखनेवाले नहीं समझ सकते कि लड्डू की मार कितनी भयंकर होती है! उससे कभी-कभी ऑपरेशन या मृत्यु की भी नौबत आ सकती है। कल वैज्ञानिक साधनों के जरिये पेट का चित्र लिया जा सके और यह बताया जा सके कि लड्डू ने पेट को किस तरह काटा है तो फिर आगे से कोई भी मित्र लड्डू खिलाने का आग्रह नहीं रखेंगे।

ये सब विकृति के आयोजन हैं

आजकल साइकिलें खूब चलती हैं। एक मित्र कहीं साइकिल से जा रहा हो तो दूसरा मित्र उसी की साइकिल के पीछे बैठ जाता है। यानी अपने मित्र को घोड़ा बना लेता है। साइकिल चालक को दो आदमियों का वजन खींचना पड़ता है। कितना गलत है यह! आधुनिक सभ्यता में इसे हम असभ्यता नहीं मानते हैं।

लोग मुझे पड़ाव पर पहुँचने के बाद पूछते हैं कि यहाँ आप को किसी प्रकार की तकलीफ तो नहीं है। इसपर मैं कहता हूँ कि गाँवो में कुत्तों के भोंकने तथा शहरों में रेडियो के भोंकने से तकलीफ होती है। भगवान ने शांति के लिए रात्रि का प्रगाढ़ अन्धकार पैदा किया है, जिसका स्पर्श आँखों को होते ही आराम मालूम पड़ता है। लेकिन इन दिनों लोगों ने अँधेरे को भी आग लगादी है! शहर में जिधर देखो उधर आग लगी हुई दिखाई पड़ती है। इसे मैं संस्कृति नहीं मानता। जहाँ प्रकाश की जरूरत हो, वहाँ प्रकाश होना अच्छा है, लेकिन बिना ही जरूरत के प्रकाश बनाये रखना विकृति है।

शास्त्रों में बताया गया है कि अन्तकाल के संस्कारों के अनुसार दूसरे जन्म में गति मिलती है। हम रात को सोते हैं, वही हमारा दैनिक अन्त है। इसलिए दैनिक कार्यक्रम पूरा करके रात में भगवान का नाम लेकर सो जाने से गाढ़ निद्रा आती है। निद्रा में विचारों का विकास होता है, वैसे ही जैसे मिट्टी से आवरित बीज का विकास जमीन के अन्दर होता है। फिर सुबह उठने से सुन्दर विचार, अभिनव स्फूर्ति प्राप्त होती है। लेकिन आज क्या होता है? शहरवाले सोने से पहले भगवान का नाम कहाँ लेते हैं? वे देखते हैं, उस समय सिनेमा। जिससे मन विकृत बनता है। शहरों में मंगल, चन्द्र, गुरु आदि को देखने का कार्यक्रम तो आजकल चलता नहीं, चलता है संस्कृति के नाम में आवरित विकृति का आयोजन। विज्ञान की तरक्की से ही मानव-मन संस्कृति-विकृति का पृथक्करण कर अपने आप को सही दिशा में अग्रसर कर सकेगा।

सांस्कृतिक विकास आवश्यक

विज्ञान की तरक्की का मतलब लोग समझते हैं कि सारे कच्चे मकान पक्के बन जायेंगे, एक मंजिले मकान कई मंजिले

बन जायेंगे, लेकिन ऐसी बात नहीं हैं। विज्ञान बढ़ने से मनुष्य को हवा, सूरज की रोशनी आदि की महिमा मालूम पड़ेगी। फिर मनुष्य स्वयं आसमान के नीचे सोना चाहेगा, पैदल चलेगा, खेतों में काम करेगा तथा कुदरत के साथ सम्पर्क बढ़ाना अच्छा समझेगा।

आज अमेरिका के लोग सप्ताहान्त के समय एक-दो दिनों के लिए अपने-अपने खेतों पर चले जाते हैं। वह संस्कृति है। विज्ञान बढ़ने से ही यह बात लोगों की समझ में आयेगी। तब सभी यह महसूस करेंगे कि सप्ताह में एक दो दिन बाहर बिताने के बजाय पूरा सप्ताह ही बाहर क्यों न बिताया जाय? इस तरह लोक-जीवन में सादगी आयेगी।

इन दिनों सभ्यता के नाम पर सारे शरीर को कपड़े से ढक लेने का रिवाज हो गया है। इससे कहा जाता है कि कपड़े का स्टैण्डर्ड बढ़ गया है और हवा तथा सूरज की रोशनी का स्टैण्डर्ड घट गया है। अब सवाल यह है कि मनुष्य के लिए ज्यादा कपड़ा मुफीद है या हवा एवं सूरज की रोशनी? पक्के मकान चाहिए या हवादार मकान? डाक्टर ने जुस ने एक किताब लिखी है 'RETURN TO THE NATURE.' उसमें लिखा है कि हम कुदरत से दूर जा रहे हैं। इसलिए हमें वापस लौटना चाहिए। इन दिनों सन्दूक के जैसे सिमेंट के पक्के मकान बनाये जा रहे हैं, जिनमें हीरालाल, रतनलाल, जवाहरलाल, माणिकलाल आदि रहते हैं। वहाँ न खुली हवा मिलती है, न सूरज की रोशनी। मकानवालों को सूर्योदय का भान ही नहीं होता। इसीलिए वे अपने घरों में 'Oil printing' रखते हैं और रखते हैं टेबल पर फ्लावर प्लाट में कागज के फूल। कितनी कृत्रिमता है यह! इससे बेहतर तो यही था कि सभी लोग खुली हवा के बीच बगीचे में रहते!

खाना हजम करने के लिए उठक-बैठक आदि व्यायाम किये जाते हैं। व्यायाम के नाम पर आदमी पचास बार उठता है और बैठता है। किसान को तो यह सारा पागलपन ही मालूम होता होगा। इस प्रकार उठने बैठने के बजाय कुदाली लेकर खेतों में क्यों नहीं जाते? खेत में काम करने को मजदूरी मानते हैं, इसीलिए इन कृत्रिम उपायों का इस्तेमाल किया जाता है और इन्हें ही फिर संस्कृति, कलचर, तहजीब, सभ्यता आदि का नाम दिया जाता है। क्या इसी सभ्यता के परिणामस्वरूप अपना देश तबाह नहीं हो रहा है। अब हमें नयी दृष्टि लानी होगी। हमें यह समझना होगा कि दुनिया में जितने अन्याय हैं, उनमें सबसे बड़ा अन्याय श्रम करनेवालों को हीन मानना है। श्रमिकों को कम तनख्वाह देना और श्रम टालनेवालों को ज्यादा तनख्वाह देना, एकदम गलत बात है। मेरी आत्मा इस अन्याय के खिलाफ बगावत करती है।

शिक्षा और तनख्वाह का मेल

कल अगर कोई मुझे ज्यादा विद्वान मानकर मेरे पेट में दस केले ठूसना चाहे तो क्या मैं उसे स्वीकार करूँगा? नहीं। मैं कहूँगा कि विद्वान होने के कारण ज्यादा क्यों खाना चाहिए? लेकिन आजकल विद्वानों की अजीब हालत है! वे ज्यादा तनख्वाह माँगते हैं। समाज ने जिनकी तालीम पर ज्यादा खर्च किया, वे ही तालीम पाने के बाद ज्यादा तनख्वाह की माँग करते हैं। ऐसा क्यों होना चाहिए? क्या पढ़े-लिखे लोगों को ऐसा नहीं कहना चाहिए कि 'आपने हमारी तालीम पर ज्यादा खर्च किया है। इसलिए कृपा करके अब अधिक खर्च मत कीजिये। हमें ज्ञान मिला है। हम स्वास्थ्य आदि के नियमों से भी परिचित हैं। इससे हमें दो रुपये रोज ही काफी है। ढाई रुपये रोज तो उन्हें दीजिए, जिन्हें ज्ञान नहीं मिल सका है, जो नहीं जानते हैं कि शरीर का सम्यक् उपयोग कैसे करना तथा किस भाँति जीवन जीना है।'

इन दिनों ब्याह-शादियों में भी पैसे की बातें आ गयी हैं। अच्छे-अच्छे लोग अपने लड़को को बैलों की तरह बेचते हैं। बाप कहता है कि मैंने अपने लड़के को खूब पढाया है, इसलिए दहेज भी खूब लूँगा। कम से दस हजार तो लूँगा ही। पढ़े-लिखे लड़कों की कीमत और बढ़ गयी! यह भारतीय सभ्यता नहीं है।

उल्टी दिशा

भारत में जो जितना विद्वान होता था, वह उतना ही अपरिग्रही होता था। यहाँ विद्या बेची नहीं जाती थी। ज्यादा पढ़े हुए लोगों को ज्यादा तनख्वाह देने में मुझे न न्याय दीखता है और न बुद्धि ही। स्कूलों में प्रधानाध्यापक को ज्यादा तनख्वाह दी जाती है और उसके हाथों में बच्चे दे दिये जाते हैं। पहली जमात का शिक्षक कम इलमवाला और कम तनख्वाह वाला होता है। शून्य में से कुछ पैदा करना सबसे कठिन होता है। इसलिए पहली जमात के लिए सबसे अधिक इलमवाला शिक्षक होना चाहिए। आगे की जमातों को पढ़ाना आसान है, इसलिए वहाँ कम योग्यतावाले शिक्षक भी चलेंगे। लेकिन अभी उल्टा हो रहा है। ऊँची नीची सीढ़ियाँ बनी हुई हैं, उसीके अनुसार तनख्वाह दी जाती हैं।

सभ्यता के नाम पर यह जो सारा चल रहा है, उसीके कारण दुनिया में कशमकश चलती है। यह तब तक नहीं मिटेगा, जब तक आप शरीर-परिश्रम की इज्जत नहीं समझेंगे। सेवा की कीमत पैसे में नहीं हो सकती। घण्टे का परिवर्तन मिनिटों में हो सकता है, किन्तु यार्डों (गज) में नहीं हो सकता। कहा जाता है कि प्रधान मंत्री की सेवा ज्यादा महत्त्व की होने से उसे ज्यादा तनख्वाह मिलनी चाहिए। लेकिन क्या रेल को झंडी दिखानेवाले की सेवा कम महत्त्व की है? इन दिनों चारों ओर जो दर्जे बने हुए हैं, उन्हें देखकर मेरा दिल रोता है। हर बच्चा नंगा पैदा होता है। हर इन्सान जब यहाँ से चलता है तो सभी कुछ छोड़कर चलता है। फिर यह अमीर-गरीब के नाम पर तफरका क्यों है? अमीर लोग गरीबों को दबाते क्यों हैं? कुछ साल पहले मैं मसूरी गया था। तब देखा कि वहाँ का कुल जीवन लोगों के शोषण पर खड़ा है। मजदूरों के साथ बेरहमी का व्यवहार होता देखकर मुझसे सहा नहीं जाता! वैसे स्थानों में हम क्या सुन्दरता देखें और क्या वैसे आचरण को सभ्यता कहें?

केवल कहने से उत्पादन नहीं बढ़ेगा

इन दिनों जो आता है, वही कहता है कि 'उत्पादन बढ़ाओ'। लेकिन क्या कहने से उत्पादन बढ़ता है? यह कहने के लिए प्लेनर्स की जरूरत क्या है? यह तो हमारे उपनिषदों में ही कह दिया गया है। उपनिषद् कोई अर्थशास्त्र की किताब नहीं है। वह तो ब्रह्मविद्या की किताब है। उसमें लिखा है: 'अन्नं बहु कुर्वीत तद् व्रतम्'। अधिक अन्न उत्पन्न करने का व्रत लो। अधिक अन्न कैसे उत्पन्न करोगे। भाखरा डेम बनाकर या छोटे-छोटे कुएँ बनाकर? इसका जवाब भी उपनिषद् में दिया है। 'येन केन च विधिना बहु अन्नं प्राप्नुयात्'। जिस विधि से अन्न बढ़ सकता हो, उसी विधि से बढ़ाओ। भाखरा डेम से बढ़ सकता है तो भाखरा डेम बनाओ और कुओं से बढ़

सकता है तो कुएँ बनाओ। उपनिषदों में कहा गया है कि अन्न जैसी चीज की किल्लत रहने से करुणा की भी किल्लत रहेगी। दया नहीं रहेगी तो धर्म नहीं टिकेगा। ब्रह्मविद्या खत्म हो जायगी। ब्रह्मविद्या के लिए आधार है—देश में अनाज की वृद्धि। लेकिन 'अन्नं बहु कुर्वीत' का मतलब 'तम्बाकुं बहु कुर्वीत' नहीं है। डालर हासिल करने के लिए अभी तम्बाकु का उत्पादन बढ़ाने पर जोर दिया जा रहा है। यह कैसा अर्थशास्त्र है? जिस देश में खेती को सर्वश्रेष्ठ धंधा माना जाता था, उस देश में १०० करोड़ रुपयों का अनाज हर साल बाहर से मँगवाना पड़े, इसमें हमारी क्या शोभा है?

तुलसीदासजी ने कहा है—'दया धरम का मूल है'। नानक ने कहा 'धरम दया का पूत'। दया का पुत्र धर्म पैदा होता है, तब समाज में सुख की वृद्धि होती है। यह बिल्कुल 'आधुनिक विज्ञान' की बात है। समाज के भौतिक जीवन का नहीं, बल्कि धार्मिक, आध्यात्मिक जीवन का आधार भी दया ही है। और जब अन्न कम हो जाता है, तब दया खतम हो जाती है। इस हालत में यदि हम संस्कृति के नाम से शरीर-परिश्रम को हीन मानेंगे तो उत्पादन कैसे बढ़ेगा? उत्पादन बढ़े बिना राष्ट्र का पतन हो जायगा। गिबन ने लिखा है कि रोम का पतन तब हुआ, जब वहाँ शरीर-परिश्रम की इज्जत खतम हो गयी।

कृषि-विद्यालयों का नाटक

आज देश में जो तालीम दी जा रही है, उसमें शरीर-परिश्रम के लिए कोई अवकाश नहीं है। कृषि-कॉलेज में मेट्रिक पास विद्यार्थियों को ही प्रवेश मिलता है। इसका अर्थ यह हुआ कि लड़का ठंढ, धूप, बारिश आदि सहन नहीं कर सकता, इस बात का पूरा यकीन होने के बाद ही उसे कृषि-कॉलेज के लायक समझा जाता है। किसान के लड़के को वहाँ प्रवेश नहीं मिल सकता! उस बिचारे का यही अपराध है कि उसकी माँ अंग्रेज नहीं थी, इसलिए वह अंग्रेजी नहीं जानता। खेती के ग्रेजुएट अच्छे किसान नहीं बनते। वे भी नौकरी माँगते हैं। इसमें उनका क्या दोष है? उनको तालीम ही ऐसी दी जाती है कि वे सिवाय नौकरी के कुछ कर भी नहीं सकते। इस तरह आज की तालीम का जो ढाँचा है, वह बिल्कुल निकम्मा है। जब तक यह तालीम जारी रहेगी, तब तक अपना देश ऊपर नहीं उठेगा।

तालीम का तरीका

राजा का बेटा श्रीकृष्ण पढ़ने के लिए गया तो गुरुजी ने उसे लकड़ी चीरने का काम दिया। यह हिन्दुस्तान का तालीम का ढाँचा है। आजकल 'पब्लिक स्कूल' चलते हैं, जहाँ पब्लिक नहीं जाती। उन स्कूलों में कश्मीर के लड़के पढ़ते हैं, शुरू से ही अंग्रेजी में पढ़ाया जाता है। अभी एक सज्जन ने कहा था कि अंग्रेजी के खिलाफ बहुत-बहुत कहा जा रहा है। लेकिन बड़े-बड़े लोगों के लड़के एंग्लोइंडियन स्कूलों में ही पढ़ते हैं, जहाँ अंग्रेजी चलती है। आजकल जो हम तालीम चला रहे हैं, क्या वह सही तालीम है, यह सोचने की बात है। अगर हमने इस विषय पर गंभीरता से सोचा नहीं है तो छह महीने के लिए स्कूलों में छुट्टी करके एक बार सोच लिया जाय। फिर देश के गणमान्य विद्वान मिलकर तालीम का जो ढाँचा स्वीकार करें, वही चलाया जाय।

हमारे देश का दिल देहातों में है और दिमाग शहरों में। आप अभी मेरे सामने शहरवाले उपस्थित हैं, इसलिए मैं आपसे अपील कर रहा हूँ। आप सोचिये कि क्या वर्तमान शिक्षण-प्रणाली से इस देश का उद्धार होगा?

योजना और बेकारी

इस समय हमारे यहाँ प्लानिंग चल रही है और बेकारी भी बढ़ रही है। जैसे-जैसे डाक्टर बढ़ रहे हैं, वैसे-वैसे बिमारियाँ भी बढ़ रही हैं। यह आखिर बात क्या है? प्लानिंग की प्राथमिक कसौटी यही होनी चाहिए कि उससे बेकारी कम हो। अगर बेकारी नहीं मिटी तो नाच-रंग और साहित्य बेकार साबित होंगे। लोगों को पहले रोटी मिले काम मिले और उसके बाद साहित्य-संगीत का विकास हो, तभी ठीक रहेगा।

मैं मानता हूँ कि संगीत आदि की भी जीवन के लिए जरूरत है, परन्तु पहले बेकारी मिटाने की आवश्यकता है।

बेकारी के कारण बताते हुए कहा जाता है कि आजकल जनसंख्या बढ़ रही है, इसलिए बेकारी भी बढ़ रही है। लेकिन क्या यह कोई अघटित घटना हुई है? जनसंख्या की वृद्धि को ध्यान में रखते हुए प्लानिंग क्यों नहीं बनाया जाता? प्लेनर्स की ओर से कहा जाता है कि अगली पंचवर्षीय योजना में हमने दस हजार नये स्कूल बनाना तय किया है, जिससे बीस हजार लोगों को शिक्षक का काम मिलेगा। इन स्कूलों से बेकार बच्चे नहीं निकलते, तब तो उसे बेकारी-निराकरण का काम कहा जा सकता था, किन्तु इन स्कूलों से नये-नये बेकार पैदा हो रहे हैं, इसलिए हमारे चिन्तन को भी सही दिशा देनी होगी।

शहरों का जीवन इतना कृत्रिम और नकली है कि वह अपने देश के लिए शोभादायक नहीं है। अभी हम बड़े-बड़े नगरों में 'एयर कन्डीशन्ड' मकान बनाते हैं, इससे क्या हम देहली आदि शहरों को पेरिस की प्रतिमा बनाना चाहते हैं? हमारी राजधानी देहली तो आसपास के गाँवों के लिए मातृ-स्थान होना चाहिए। उसे आदर्शरूप मिलना चाहिए। आज तो हमने उसे विदेशी माल से भर रखा है, क्या इसे ही हम अपने देश की प्रगति मान लें?

आप सब इन बातों पर सोचिये। मैं किसी पर टीका नहीं कर रहा हूँ। जिन पर टीका कर रहा हूँ, उन्हें मैं अपना ही रूप मानता हूँ। इसलिए यह टीका मैं अपने ऊपर ही कर रहा हूँ। यह प्रकट चिन्तन है। हमें सोचना चाहिए कि देश किधर जा रहा है? अभी समय है। यहीं से वापस लौटना चाहिए। हमें दौलत के साथ-साथ दया भी बढ़ानी है। अगर हमने हिम्मत बढ़ाने के बदले सेना बढ़ाई, दया के बदले दवाखाने बढ़ाये और गुणों की वृद्धि करने के बजाय केवल भौतिक उन्नति की ही चिन्ता की तो हिन्दुस्तान आगे नहीं बढ़ेगा। ◆◆◆

मैं वर्ग-संघर्षवाला हूँ

"आज के ये छोटे-छोटे मालिक भी अपनी चीजों को पकड़े हुए हैं। मैं एक लंगोटी का मालिक हूँ। वह मेरी है, ऐसा वे कहते हैं। बड़े मालिक भी अपनी धोती को पकड़े हुए हैं और कहते हैं कि वह मेरी है। यह भी मालकियत का मोह रखनेवाला है और वह भी मालकियत का मोह रखनेवाला है। दोनों एक ही वर्ग हैं।

"कम्युनिष्ट समझते हैं कि वर्ग-संघर्ष होगा, तब काम होगा। मैं उन्हें कहता हूँ कि तुमने एक ही वर्ग बना रखा है। इससे संघर्ष किसके साथ होगा? सच तो यह है कि वे वर्ग-संघर्षवाले हैं नहीं, वर्ग-संघर्षवाला तो मैं हूँ। मैं दो वर्ग बना रहा हूँ—उदार और कंजूस। अब इन दोनों के बीच लड़ाई होगी।

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन

कुचाना (पंजाब) १६-४-'५९

पंजाब में ब्रह्मविद्या ही चल सकती है

पंजाब में हमारा काम धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है। अब थोड़ा अधिक गहरा जानने की जरूरत है। फिर अंदर से पानी का स्रोत फूट निकलेगा। अभी हमने पिलानी में देखा कि अन्दर से पानी लाया गया था। जहाँ पहले पानी का नाम ही नहीं था, वहाँ सर्वत्र पानी-ही-पानी हो गया। आस्ट्रेलिया में खूब बगीचे हैं। वहाँ खूब गहराई में पानी है। पंजाब में भी पानी खूब है, लेकिन गहराई में है। धीरे-धीरे उसका दर्शन हो रहा है। मेरा खयाल है कि इस प्रान्त में ब्रह्म विद्या के बिना काम नहीं होगा। दूसरी कोई चीज यहाँ लोगों को नहीं जँचेगी, नहीं भायगी, नहीं रुचेगी, फीकी लगेगी।

अश्वत्थामा को उसकी माँ पानी में आटा मिलाकर दूध पिलाती थी। एक दिन अश्वत्थामा कहीं भोजन के लिए गया, वहाँ उसे अच्छा दूध पीने को मिला। फिर वह घर आकर कहने लगा कि माँ, आज मैंने दूध का स्वाद चख लिया है। उस दिन माँ की पोल खुल गयी। एक दफा अच्छा दूध पीने के बाद दूसरी चीजें फीकी लगती हैं, वैसे ही पंजाब ने वेद, उपनिषद्, गीता, गुरु-ग्रंथ चख लिया है। अब ऐसे प्रदेश को क्या सिखाया जाय? क्या कानून का स्वाद उसे आयेगा? कानून के जरिये पंजाब का उद्धार होगा? ब्रह्म विद्या के बाद पंजाब को दूसरी चीजें फीकी लगेगी, यह मैंने समझ लिया है। इसलिए यहाँ ब्रह्मविद्या के जरिये ही प्रवेश होना चाहिए।

जीवन के टुकड़े न करें

स्वामी दयानंद ने आधुनिक जमाने में बहुत काम किया। उनके सारे काम से वेद का गहरा संपर्क था। इसलिए उनका काम परिणामकारक हुआ। रामतीर्थ का भी पंजाब में काम चला। उनके पास भी ब्रह्मविद्या की चीज थी। उनके पास जो विद्यार्थी थे, उनका ब्रह्मविद्या से बहुत आकर्षण था। इसलिए इस प्रान्त में ब्रह्मविद्या से कोई कम शब्द नहीं चलेगा। यह मैंने प्रवेश के साथ ही देखा और कहा कि तुम लोग संख्या में कम हो तो भी परवाह नहीं। पर तुम्हारा प्रेम-क्षेत्र और कर्म-क्षेत्र एक होने दो। काम के लिए एक मित्र और प्रेम के लिए दूसरा। इस जमात के साथ प्रेम का सम्बन्ध और उस जमात के साथ काम का संबंध। इससे जीवन ब्रह्म-विद्यामय नहीं बना, उसकी पर्सनालिटी टूट-फूट गयी।

पंजाब में मुझे स्वतन्त्र दर्शन होता है। वैसे हर जगह नये-नये विचार सूझते हैं। ये कहाँ से सूझते हैं, मालूम नहीं। यहाँ आने पर भी यह नयी चीज सूझी है कि प्रेम का क्षेत्र और कर्म का क्षेत्र एक होना चाहिए। प्यार के लिए अपने बीबी के बच्चे और काम के लिए स्कूल में बच्चे पढ़ाना, ऐसे दो टुकड़े हमने बना लिये हैं। महापुरुषों के जीवन, प्रेम के साथी और कर्म के साथी एक ही थे, इसीलिए उन्होंने बहुत काम किया। यह एक नया दर्शन मुझे हुआ है। नयी चीज सूझी है। इससे ऐसा आनन्द होता है कि अब ज्यादा जीने में कोई अड़चन नहीं है। अब हमें ६४ साल हो गये, लेकिन हम और जीना चाहते हैं। क्योंकि जीने के लिए कोई कारण, कोई दिलचस्पी मिलती है। पंजाब में आने के बाद हमें वह चीज मिली है।

मैं ब्रह्म

आज कुछ हरिजन हमारे पास आये थे। उन्होंने अपनी माँग पेश की। मैंने कहा कि तुम माँग करना छोड़ दो। तुम नीचे की श्रेणी के हो, यह बात भूल जाओ। तुम्हारा जन्म लेने के लिए नहीं हुआ है, देने के लिए हुआ है। तुम देनेवाले बनो। मैंने उनको रैदास का संदेश सुनाया। वे एक ऐसे महापुरुष हो गये, जिन्होंने सबको ऊपर उठाया। हम सिर्फ माँगनेवाले न बनें। हम अपनी चीज दुनिया को दें। अपने पास जो है, वह दें। यह मेरी बात उनको ठीक लगी और उन्होंने संपत्ति-दान दिया। वे माँगने के लिए आये थे और देनेवाले बन गये। मनुष्य नीचे गिरते हैं और ऊपर उठते हैं। उनका ऊपर उठना ही असलियत है। असल में मनुष्य ब्रह्ममय है। उसको कहा जाय कि तू नीच है, तू हीन है तो वह वैसा ही बनता है। यह जप का परिणाम है। तू ऊँच है, परमेश्वर का संदेश तेरे लिए मिशन है, तू ब्रह्म है, ऐसा भास अगर होगा तो मनुष्य के जीवन में लज्जत आयेगी। इसलिए हमेशा मनुष्य को यह कहना चाहिए कि मैं ब्रह्म हूँ।

मैं आकाश खाता हूँ

आज अन्तुस्सलाम ने पूछा कि तुम कम खाते हो तो तुम्हारा कैसे निभता है? मैंने कहा, एक कारण तो यह है कि मैं आकाश खूब खाता हूँ और बड़ी श्रद्धा से मानता हूँ कि मनुष्य को खाने की सबसे बड़ी चीज कोई है तो आकाश। वैसे क्रोध में मत्सर में, द्वेष में, काम में, विकारों में मनुष्य के चित्त का क्षय होता है। इस तरह क्षय नहीं होना चाहिए। 'ना कोई बैरी, ना ही बिगाना।' इस तरह का अनुभव रोज आता है। किसी के लिए बैर नहीं है, बल्कि जो मेरे साथ हैं और दूर रहते हैं, वे भी परमेश्वर के अंश हैं। मैं उन सबके साथ समान भावना रखता हूँ। जो कुछ थोड़ा खाता हूँ, वह शरीर के लिए खाता हूँ। इसलिए आनंद आता है। मेरे जीवन में जितना आनन्द मैं देखता हूँ, उतना शायद ही किसी मनुष्य के जीवन में होगा। रातभर और दिनभर देखता हूँ एक ही भावना, आनन्द के बिना दूसरी भावना नहीं है। चित्त का क्षय नहीं होता है, इसलिए मेरी शक्ति कायम रहती है। बाह्य चीजें मैं बहुत थोड़ी लेता हूँ, परन्तु खूब ताकत शरीर में है। जैसे चीन के लोग थोड़ी सी जमीन से बहुत पैदावार करते हैं, वैसे ही हम छोटे से शरीर से इतनी बड़ी पैदावार करते हैं। याने काम करते हैं। जीवन में एक संदेश है। इसलिए नित्य-निरंतर स्रोत बहता रहता है। वह सूखता नहीं है। जैसे मैंने हरिजनों को कहा था कि तुम कब तक माँगते रहोगे? देना भी सीखो। वैसे ही हम सबको कुछ-न-कुछ देना है, यह ध्यान में रखना होगा। अब मुसीबतें तो हैं ही, उनका मुकाबला करना ही होगा।

प्रेम देना जानता है, लेना नहीं

एक भाई आकर कहने लगे कि मुझे कोई खानगी सवाल पूछना है। मैंने कहा कि ठीक है, एकान्त में आओ। परमेश्वर साथ रहेगा, लेकिन फिर भी आओ। उसने कहा कि मेरे पास दौलत बहुत है, किसी चीज की कमी नहीं है, लेकिन पत्नी के साथ मेरी बनती नहीं है। क्या करूँ? मैंने कहा, मेरी शादी तो नहीं हुई है, मैं क्या बताऊँ? बिल्कुल बेतजुर्बा मनुष्य होने से मैं सलाह देने के लिए योग्य नहीं हूँ। परन्तु इतना कह सकता हूँ कि आपकी पत्नी के और आपके बीच प्रेम नहीं है, पैसा है। बहुत से लोग पत्नी पर प्रेम नहीं करते हैं। जिसे प्रेम मानते हैं, वह भोग-वासना है। प्रेम देना जानता है, लेना नहीं जानता।

आप दोनों के बीच पैसा है। इसलिए पैसे से मनुष्य सुखी होता है—यह गलत बात है। सुखी तो वह मनुष्य है, जो अपनी आत्मा में लीन हो और मेरे में सब हैं और सब में मैं हूँ, ऐसा महसूस करे। यही बात मैंने हरिजनों को बतायी।

गदहे का परिवर्तन घोड़े में हो गया। गधा और घोड़ा एक ही जाति के हैं। आज ही रास्ते में हमने एक गदहा देखा और उसकी पीठ पर डेढ़ सौ पौंड का भार! नानक लिखते हैं कि धर्मरूपी बैल पर कितना भार है? मैंने कहा कि उस गदहे पर कितना ज्यादा भार है। उसकी खिलाई-पिलाई भी अच्छी नहीं होती होगी। अगर गदहे की खिलाई-पिलाई अच्छी होती तो उसका घोड़े में परिवर्तन हो जाता। आज का परिवर्तन देखो! माँगनेवाले देनेवाले बन गये। मैंने उनको कहा कि तुम्हारी मुसीबतें हम जानते हैं, लेकिन 'हमारी मुसीबतें हैं, हमारे दुःख हैं' इस तरह अपने ही दुःखों से दुखी मत होओ। हमें देना है और दूसरों के मुसीबतों में मदद करनी है, यह सोचो।

आज कुछ भाइयों ने संपत्ति-दान दिया है। कोशिश करने पर काम होता है। माँगने में हिचक रखेंगे तो काम नहीं होगा। लड़का माँ के पास से बिल्कुल हिचक न रखते हुए माँगता है। अगर हिचक है तो माँ दुखी होगी। हम जनता के पास हिचक रखते हैं, क्योंकि हम जनता को माँ नहीं मानते हैं। इस तरह मन में शंका रखोगे तो कौन देगा? हम में श्रद्धा और विश्वास होना चाहिए। अपने आप पर विश्वास होना चाहिए, मानवता पर विश्वास होना चाहिए और धर्म पर विश्वास होना चाहिए। विश्वास से माँगे तो किसीकी भी ना कहने की ताकत नहीं है। विश्वास ही सब का मूलाधार है।

बापू ने हमारे लिए काफी काम छोड़ा है

आज एक भाई कहने लगे कि कांग्रेस देश की बहुत बड़ी संस्था है, लेकिन उसमें बहुत झगड़े हैं और उसका परिणाम हमारे गाँव पर भी होता है। मैंने कहा था कि गांधीजी की यह इच्छा थी कि कांग्रेस के बदले में लोक-सेवक-संघ बने। स्वराज्य के लिए बहुत बड़ी सेवक-संस्था होनी चाहिए। गंगा में पानी कितना है? फिर भी हमारे लोटे में कितना आयेगा? उनके साथ सारा पानी बह कर चला गया और अपने हाथ में सत्तावाली संस्था रह गयी। लेकिन होना यह चाहिए कि संस्था सेवावाली बनें। गांधीजी ने कहा था, लेकिन उनकी बात नहीं मानी। स्वराज्य-प्राप्ति के काम में वे लगे रहे, परन्तु आखिर उन्होंने भी कह ही दिया कि अब मेरी कोई सुनता नहीं है, ऐसा ही वर्णन भागवत में आता है। गांधीजी अपने से बहुत आगे के जमाने के थे। अगर वे उसी जमाने के होते तो उनका काम आगे नहीं चलता। उसी में वे खत्म हो जाते। लेकिन हमारे लिए भी उनका काम बाकी है।

आज एक हंगेरी के भाई ने सवाल पूछा कि कोई आपका शिष्य बनने के लिए तैयार होगा तो? मैंने कहा कि मेरा काम आगे वही चलायेगा, जिसने मुझे प्रेरणा दी। मैं काम करनेवाला हूँ, ऐसी भावना मेरी नहीं है। मेरी न कोई संस्था है, न मेरा हुक्म माननेवाले कोई हैं, जिन पर मैं डिसीप्लिनरी ऐक्शन ले सकता हूँ। ऐसी हालत में जिस ताकत ने मुझे प्रेरणा दी है, वही ताकत आगे काम करेगी। इसलिए मेरा कोई शिष्य बनेगा, ऐसा मैं नहीं मानता हूँ। फिर मैंने कहा कि मेरे पीछे सब सत्पुरुषों के आशीर्वाद हैं। वे मेरे पीछे हैं, आगे हैं, अन्दर हैं, बाहर हैं, ऊपर हैं, नीचे हैं। जैसे सूर्य की किरणें मैं स्पष्ट देखता हूँ, वैसे ही सर्वत्र ये आशीर्वाद देखता हूँ। मैं कहना यह चाहता था कि इतनी श्रद्धा और विश्वास से हम करेंगे तो काम होगा। जैसी श्रद्धा होगी, वैसा काम होगा।

हर जगह बाबा की माँग पूरी होती है

कल्पवृक्ष के नीचे एक मनुष्य बैठा था। गर्मी के दिन थे। उसे प्यास लगी। उसके मन में विचार आया कि यहाँ थोड़ा पानी मिले तो कितना अच्छा हो। उतने में एक घड़े में ठंडा, मीठा, निर्मल पानी आया। उसने पानी पी लिया। फिर उसके मन में विचार आया, यहाँ खाना मिल जाय तो कितना अच्छा हो। खाने की थाली भी सामने आयी, फिर सोचने लगा कि यहाँ सोने के लिए भी कुछ मिले तो बड़ा अच्छा हो। एक पलंग उसके सामने आया। तब वह सोचने लगा कि यह क्या चमत्कार है? यहाँ कोई भूत तो नहीं है? एकदम उसके सामने भूत खड़ा हुआ। फिर उसके मन में आया कि यह भूत मुझे खायेगा तो नहीं? उसी समय भूत ने उसे खा डाला। वैसे ही जनता कल्पवृक्ष है। तुम कल्पना करो कि कौन देनेवाला है? तो कोई नहीं देगा। इसलिए मै जिसके पास जाऊँगा, वह मुझे देगा, ऐसी श्रद्धा से लोगों के पास पहुँचें।

बाबा की खूबी यह है कि वह जनता के लिए सर्वोत्तम भावना रखता है। जनता हमारी माँग पूरी करेगी, यह विश्वास बाबा को है। इसलिए इसकी माँग जनता पूरी करती है। बीच में मैंने कहा था कि पंजाब में कोई निःस्वार्थी मनुष्य नहीं है, लेकिन मै मानता हूँ कि जिस कसौटी पर गीता, उपनिषद् कसता है, उस कसौटी में पास होनेवाला मनुष्य पंजाब में है। लेकिन वह "गुप्तरूपेण चरन्ति"। उसकोबाहर लाना होगा। इसलिए इस काम के लिए श्रद्धा और परम विश्वास होना चाहिए। जनसेवा करनेवाले लोग मिलेंगे तो उन गुप्त ऋषियों को बाहर निकाल सकते हैं। अब ये गुप्त ऋषि किस मनुष्य में छिपे होंगे, यह ऊपर-ऊपर से पता नहीं चलता, उनको ढूँढना होगा।

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन

खनोरी-पक्खी (पंजाब) १९-४-'५९

गाँव का विकास ही राष्ट्र-निर्माण की बुनियाद है

आज छोटा सा गाँव था। इसलिए हमारे मन में विचार आया कि इस गाँव की प्रदक्षिणा करनी चाहिए और घर-घर में जाना चाहिए। गाँव को भगवान की मूर्ति समझकर हम हर घर में गये। इसी तरह हर गाँव में ऐसा कोई सेवक निकलना चाहिए, जो गाँव को भगवान समझकर गाँववालों के पास पहुँचे। किसीके घर में क्या दुःख है, क्या बीमारी है, क्या कमी है, यह देखे और शाम को सभा करके लोगों के सामने सारी दिक्कतें रखें। उस सभा में इस विषय पर चर्चा हो कि हम क्या मदद कर सकते हैं? फिर उतनी मदद उन घरवालों को पहुँचाने का काम भी सबके सहयोग से करना चाहिए। गाँव में तरह-तरह के दुःख होते हैं। किसी का बैल मर गया, कहीं बीमारी है, कहीं बीज दिलाना है, इस तरह उनके दुःख, और उनकी दिक्कतें नोट करनी चाहिए और रोज शाम को भगवान का नाम लेने के लिए सबको इकट्ठा करना चाहिए। गाँववालों को राम-कहानी सुनानी चाहिए। इससे समस्त गाँव का बहुत भला होगा।

ये गाँव हैं या जङ्गल?

आज ये गाँव गाँव नहीं रहे हैं, जंगल बन गये हैं। जंगली

जानवरों को शिकार मिल जाती है तो खुश होते हैं। नहीं मिलती है तो नाराज होते हैं। गाँव में कुछ घर बहुत बड़े हैं, कुछ घर बहुत ही छोटे हैं। हमें सुख दुःख में समान बाँट कर खाना है। सुख और दुःख दोनों हमने चख लिया तो सुख बढ़ेगा और दुःख घटेगा। सबको इकट्ठा करके यह सोचना चाहिए कि हम बाँटकर खाने का काम करें। एक परिवार जैसे बनें। फिर गाँव की सभा बनायें, जो ग्रामसभा कहलायेगी।

आजकल जो ग्राम-पंचायत होती है, वह खतरनाक होती है। वह हमें नहीं चाहिए। उसमें तो अवसरवादियों की चलती है। जिसमें सबकी चलेगी, वह सर्वोदय की सभा होगी। ऐसी सर्वोदय की ग्राम-सभा हर गाँव में होनी चाहिए। हमने देखा, आपके गांव में पाँच कुएँ हैं। उनमें से बालटी-भर पानी निकालें तो क्या पानी में उतना गढ़ा पड़ता है? बालटीभर पानी निकालने की बात फौरन पानी की सतह से समान हो जाती है। अगर गल्ले के ढेर से मुट्ठीभर गल्ला निकाला तो वहाँ गढ़ा हो जाता है। पानी की बूँदों में जो गुण हैं, वह गल्ले में नहीं है। पानी की बूँदे फौरन एक हो जाती हैं। गल्ले में कुछ महात्मा दाने ऐसे होते हैं, जो गढ़ा पूरा करने के लिए निकलते हैं, आपका गाँव और आपको पानी के जैसा बनना चाहिए। पानी की बूँदों में यह प्रेम है। अपने में दूरी है, यह वह नहीं दिखायेगा। पानी की सतह के मुताबिक गाँव में गढ़ा नहीं दीखना चाहिए। समाज में गढ़ा नहीं दीखना चाहिए। सबको एक हो जाना चाहिए। यही है विनोबा की "अरदास" याने प्रार्थना है।

ग्रामदान : एक सहज तरीका

गाँव में सबसे बड़ी चीज प्रेम है और नंबर दो में जमीन है। हम गाँववालों को कहते हैं कि तुम प्रेम भी बाँटो और जमीन भी बाँटो। आज कुल अक्ल चंडीगढ़ में इकट्ठी हो गयी है। वह इतनी ज्यादा है कि वहाँ एक-दूसरे से टकराती है। सारे अखबार टक्करों से भरे रहते हैं। कुल दुनिया के और चंडीगढ़ के झगड़ों से अखबार रंगे रहते हैं। उन झगड़ों में गरीब पीसे जायँ तो भी उनकी कोई परवाह नहीं है। आज गाँव के प्रेम को हमने घर में रोका है। उसे बाँटते नहीं हैं। देखिये, यहाँ जितने चेहरे हैं, सभी कितने प्यारे हैं! इसलिए हमें प्रेम को बाँटना चाहिए। उसी तरह से गाँव में जो जमीन है, वह सबको मिलनी चाहिए। हरएक का उस पर हक है। गाँव में ऐसा समाज बनना चाहिए, जो समान हो। अपने हाथों की पाँचों अंगुलियाँ मिलकर काम करती हैं, वैसे ही गाँव में होना चाहिए। उन अंगुलियों में बहुत फर्क नहीं है, थोड़ासा फर्क है। हरएक की अपनी-अपनी सीफत है। इसलिए लाखों काम करती हैं। कारण उनमें सहयोग है और बहुत ज्यादा फर्क नहीं है। उसी तरह गाँव में होना चाहिए। ऊँच-नीच भाव, जाति-भेद, धर्म-भेद इनको भूल जाना चाहिए। जितने लोग हैं, सब हमारे हैं। जिसको जरूरत हो, उसे हम मदद करें, जिसके पास जो नहीं है, वह उसे दें। सब अपना ही है। एक जेब से दूसरे जेब में डालने से कुछ बिगड़ता नहीं है। वैसे ही एक घर से दूसरे घर में मदद देने में कुछ बिगड़ता नहीं है, नुकसान नहीं है। यह काम आप कर सकते हैं। ग्रामदान इस काम को सहज ढंग से करने का एक तरीका है।

गाँव को कैसे बनाएँ?

ग्रामदान से डरना नहीं चाहिए। ग्रामदान देना याने गाँव छोड़कर बाहर जाना नहीं है। ग्रामदान याने गाँव के लिए दान। एक बच्चे के कान में बहुत दुःख था और वह रो रहा था। मैंने पूछा तुम्हारे आँखों में कोई दुःख है क्या? उसने कहा, नहीं। कानों में दुःख है! कान में दुःख है तो आँख रोती है। क्योंकि आपस में प्रेम है। इसीलिए शरीर अच्छा रहता है। पाँव में काँटा घुस जाता है तो फौरन हाथ मदद के लिए दौड़ता है। वैसा ही गाँव में होना चाहिए। तभी कहा जायगा कि गाँव के समाज में चैतन्य है। हम हमेशा कहते हैं कि ग्रामदान याने अभयदान है। जैसे शरीर में सब इन्द्रियाँ एक-दूसरे के दुःख में मदद पहुँचाती हैं, उसी तरह गाँव के समाज में होना चाहिए, तभी गाँव में सुख बढ़ेगा।

आज गाँव में एक शादी होती है तो जिंदगीभर बरबादी होती है। आज रिश्तेदार शादी में, किसी के जन्म पर या किसी की मृत्यु पर भोजन के लिए इकट्ठा होते हैं। क्या यह कोई समाज है? इसलिए हम कहते हैं कि हर घर में मेरेज बैंक होनी चाहिए। शादी किसी के भी घर की हो, सारे गाँव की है, ऐसा होना चाहिए। इस तरह सारा गाँव एक होना चाहिए। तभी गाँव टिकेंगे। ऐसा हो जाता है तो गाँव में सरकारी दखल नहीं होगा। परन्तु सरकार की मदद मिलेगी। जो गाँव एक हो जाता है, वहाँ व्यापारी, वकील और साहूकार इनकी नहीं चलती है। सारा गाँव मिलकर उसका मुकाबला करेंगे। इस तरह का हमें हमारा गाँव बनाना है।

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन

बाणाटोंसा (पंजाब) ७-५-'५९

बिना सेवा के सत्ता नहीं टिकेगी, यह कांग्रेसवाले शीघ्र समझें!

सभी रचनात्मक कार्यकर्ता, राजनैतिक कार्यकर्ता तथा सभी धर्मवाले हमारे ही लोग हैं। वे सभी मिलकर भारत की एक ताकत हैं। समय-समय पर हमारे इस भूदान-ग्रामदान-आन्दोलन को हर प्रकार के लोगों का आशीर्वाद मिला है। हमलोग यदि किसी प्रकार का अभिमान कर किसी का दिल न तोड़ें तो बहुत जल्द कामयाब हो सकते हैं। इन दिनों मैं देख रहा हूँ कि पंजाब में हमारी ताकत बन रही है। लेकिन अहंकारवश हम छोटी-छोटी बातों पर अड जाते हैं। इसलिए हमी लोग अपने काम को तोड़नेवाले सिद्ध होते हैं।

आज इस जिले के कांग्रेसवाले हमसे मिलने आये थे। हमने उनसे कहा कि यह काम आपका है, ऐसा समझकर इसे आप उठा लीजिये। आखिर इस काम को करनेवाले कौन हैं? करुणावान पुरुषों से ही यह काम होगा। बुद्ध भगवान ने करुणा से प्रेरित होकर दुनिया को जो सन्देश दिया, वह सन्देश आज ढाई हजार वर्ष बाद भी याद किया जा रहा है। करुणा में बहुत ताकत होती है। मेरी यात्रा आठ साल से चल रही है। इसके पीछे भी करुणा की ही प्रेरणा है।

मैं चाहता हूँ कि भूदान-ग्रामदान के काम को निष्काम भाव से किया जाय। लेकिन कोई अपनी इज्जत बढाने के खयाल से इस काम को करता है और इससे उसकी इज्जत बढ़ती है तो भी मुझे खुशी ही होती है। कांग्रेसवालों को इस कामको उठा ही लेना चाहिए।

कांग्रेसवाले सेवा-कार्य नहीं करेंगे तो अब वे कब तक टिके रह सकेंगे। सेवा किये बिना हमेशा के लिए राज्यकर्ता बनकर नहीं रहा जा सकता। ६० साल तक कांग्रेस ने पुण्य किया था। लेकिन इन दस वर्षों में उसका कितना अधिक फल भोगा है, इसका भी जरा खयाल कीजिये। शास्त्र में कहा गया है—'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति', पुण्य क्षय होने पर स्वर्ग से धक्का मारकर निकाल दिया जाता है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि कांग्रेसवाले सेवा-कार्य करके कांग्रेस के नाम को बनाये रखें।

◆◆◆

प्रार्थना-प्रवचन

वनूर (पंजाब) २९-४-'५९

जिसके साथ आचार का बल है, वही सच्चा विचार है

लगभग एक महिने से हम पंजाब में घूम रहे हैं। पंजाब की जनता बहुत ही आशाभरी निगाहों से भूदान की ओर देख रही है। अब लोगों में यह उम्मीद पैदा हुई है कि सर्वोदय से सबका मेल-मिलाप होगा। पंजाब में अनेक किस्मके झगड़े हैं। उनसे मुक्ति पाने की भी राह मिल जायगी। देश में नैतिक गिरावट हो रही है, उसका उपाय सर्वोदय में है।

केवल भगवान का भरोसा

आज एक बुजुर्ग—जो कि बापू के साथी हैं—हमसे कह रहे थे कि 'इस समय देश में किसी नेता तथा किसी पार्टी पर लोगों का विश्वास नहीं है। सारे नेता एक-दूसरे की निंदा करते हैं। ऐसी हालत में आपके शब्दों का जनता पर कुछ असर होता है और लोग विश्वास करते हैं, यही बहुत खुशी की बात है।' सर्वोदय पूर्ण-अखंड विचार है। इसमें सब की भलाई का खयाल है, इन्सान और इन्सानियत के प्रति भाव है। यह एक ऐसा कार्यक्रम है, जिससे लोगों का दिल के साथ दिल जुड़ता है। हम पूर्ण की सेवा करने के उसूल पर काम कर रहे हैं। हमारे शब्दों का जो जनता पर असर होता है, वह भगवान की अपार कृपा ही है। मैं मानता हूँ कि चाहे कुल दुनिया मेरे साथ हो, लेकिन भगवान मेरा साथ छोड़ दे तो सारी दुनिया का साथ मेरे लिए निकम्मा सिद्ध हो जायगा। गुरु नानक के शब्दों में कहूँ तो इतना ही है कि चाहे नव खंडों में हमारी बात चले, पर परमेश्वर हमारे साथ न हो तो 'बात न पूछे कोई'।

सारा समाज हरिजन बने या...

आज एक भाई ने हरिजनों की समस्या हमारे सामने रखी। इस समय सचमुच ही हरिजन पिछड़े हुए हैं। जो सब से पिछड़े हैं, उनकी चिन्ता करना सर्वोदयवालों का फर्ज है। इसलिए भूदान की जमीन बटती है तो कुल जमीन का १।३ हिस्सा हरिजनों को दिया जाता है। लेकिन वे हरिजन हैं, ऐसा मानकर उन्हें जमीन नहीं देते। वे पिछड़े हुए हैं, इसीलिए उन्हें जमीन दी जाती है। मैं कहना चाहता हूँ कि हरिजन भी अब यह समझ लें कि हम जन हैं, सज्जन हैं या कुल का कुल समाज ही अपने आपको हरिजन समझे। हरिजन अलग हैं और हम अलग हैं, यदि अब भी हम ऐसा ही मानते रहेंगे तो समाज विभक्त हो जायगा। समाज के एक टुकड़े की उन्नति के बारे में सोचते रहने से अब जमाना साथ देनेवाला नहीं है। और है मान लो, अगर जमाना साथ देता है तो भगवान साथ देनेवाला नहीं है। टुकड़ों के चिन्तन से दिल नहीं जुड़ते हैं।

हरिजनों से भी मैं कहता हूँ कि आप सिर्फ माँगनेवाले नहीं, देनेवाले भी हैं। भगवान ने हरएक के पास ऐसी ताकत दी है, जो वह दूसरों के लिए उपयोग में ला सकता है। मनुष्य हमेशा अपनी ही क्यों सोचे? दूसरों के बारे में सोचने का भी उसे पूरा-पूरा अधिकार है। अब तक मनुष्य ज्यादा से ज्यादा अपनी जमात के लिए सोचता था। लेकिन अब वह समय आ गया है, जब एक जमात दूसरी जमात के लिए सोचना शुरू कर दे।

प्रेमदान ही महादान है

यहाँ के लोग बड़े प्रेम और शान्ति के साथ हमारी बातें सुनते हैं। किसी ने हमें बताया कि 'ये लोग सिर्फ सुनते ही हैं, करते कुछ नहीं। मैंने कहा कि लोगों ने हमें अपने दो कान दिये—यही बहुत बड़ी बात है। भक्ति का आरम्भ श्रवण से होता है, जिसकी अन्तिम परिणति समर्पण में हो जाती है। इसलिए यकीन रखिये कि लोगों का यह प्यार जाया नहीं जायगा। अभी यहाँ स्थूल दान नहीं मिल रहा है। लेकिन प्रेमदान मिल रहा है। भूदान ग्रामदान तो छोटा दान है, प्रेमदान उससे भी बहुत बड़ा है। पंजाब के सभी लोगों का जो हम पर प्रेम और विश्वास है, क्या वह कम चीज है? यहाँ की सभी पार्टियों के बड़े-बड़े नेता आकर कहते हैं—आप हमारे झगड़ों के बारे में सोचिये और उन्हें मिटाने की सलाह दीजिये। लोग जानते हैं कि दुनियाभर के लोग झगड़ों को बढ़ानेवाले हैं, लेकिन यह एक ऐसा शख्स है, जो झगड़ों को मिटानेवाला है। क्या यह इतमीनान कम चीज है? यह विश्वास की अभिव्यक्ति विनोबा के लिए नहीं, भूदान-ग्रामदान के लिए है। मुझ जैसा इन्सान तो एक बहाना है। इसलिए मेरा विश्वास है कि पंजाब के बहुत सारे झगड़े मिटाने का रास्ता निकलनेवाला है और यहाँ खूब काम होनेवाला है।

सर्वोदय का अवतार

हिंदुस्तान में जितना सर्वोदय-साहित्य बिकता है, उतना टेक्स्ट बुक्स और धार्मिक साहित्य को छोड़कर दूसरा कोई साहित्य नहीं बिकता। इसका मतलब यह है कि यह एक नया अवतार हो रहा है। जब कोई नया विचार उत्पन्न होता है, जो कि लोगों को बचानेवाला मालूम होता है—उसको अवतार कहते हैं। राम का अवतार नहीं था, अवतार था सत्य का। कृष्ण का अवतार नहीं, उसके रूप में प्रेम का अवतार था। बुद्ध के रूप में करुणा का अवतार था। फिर हुआ 'सत्याग्रह' का अवतार। अब आपके सन्मुख सर्वोदय का अवतार प्रकट हो रहा है। परमेश्वर की इच्छा है कि यह सर्वोदय-विचार सर्वत्र फैले। आप इस पर विश्वास रखेंगे तो यहाँ शान्तिमय क्रान्ति होनेवाली है।

पंजाब में अभी तक 'सर्वोदय' कुछ नहीं कर रहा है। क्योंकि उसके लिए जितनी कार्यकर्ताओं के हृदय की शुद्धि अपेक्षित है, उतनी अभी है नहीं। कार्यकर्ताओं को बिल्कुल निरहंकार होकर इस काम में तन्मय हो जाना चाहिए। रामजी के बन्दर बिल्कुल निरहंकार थे, इसीलिए वे भगवान के औजार बनने की क्षमता पा सके। हम भी निश्छल मन से भगवद्शरण होकर आपस-आपस में प्रेमपूर्वक रहेंगे, तभी यहाँ का काम होगा।

यदि विचार है तो आचार क्यों नहीं?

आप अभी हमारी बातें सुन रहे हैं। हम चाहते हैं कि आप अपने ये दोनों कान हमें दे दें। एक कान हमारे लिए और दूसरा

कान दूसरों के लिए होने से कोई काम पूरा नहीं हो सकेगा। दोनों कान देने से ही कामयाब होते हैं। आप दोनों कान हमें दे देंगे तो हमारी बातें आपको जँच जायगी। फिर आपके अन्तःकरण में ही धर्मक्षेत्र-कुरुक्षेत्र शुरू होनेवाला है। आपको फिर अन्दर से ही पूछा जायगा कि जब तुम्हें ये बातें जँच गयी हैं, तब तुम इनके अनुरूप आचार क्यों नहीं करते हो? विचारों के अनुसार आचार नहीं होता तो मन में दुःख रहता है। हृदय में कुरुक्षेत्र होने से पांडवों की विजय होने ही वाली है।

अब तक मैंने ईसामसीह के इस वचन के मुताबिक प्रयोग किया था कि 'माँगो और मिलेगा। लेकिन अब मैं दूसरा ही प्रयोग करनेवाला हूँ। 'न माँगो फिर भी मिलेगा।' पंजाब से मैं माँगूँ—इसमें पंजाब का अपमान है। इसलिए मैं आपको सिर्फ विचार समझानेवाला हूँ। फिर विचार अपना विस्तार अपने आप करने में क्षम है। जिसके हृदय में विचार प्रवेश करेगा, वह चैन से नहीं जी सकेगा। विचार के अनुसार आचार करने की आकांक्षा उत्पन्न कर देना ही सच्चे विचार का काम है।

♦♦♦

प्रार्थना-प्रवचन

भांकरपुर ३०-४-'५९

उदारता भारतीय संस्कृति का गौरव है

हिन्दुस्तान को आजादी हासिल हुई। मगर अभी गाँववालों को उसकी अनुभूति नहीं हो रही है। गाँववाले अपनी योजना आप बना सकें, तभी आजादी का असली उपयोग हुआ, ऐसा माना जायगा। अंग्रेजों के जमाने में जनता अपने को पराधीन ही समझती थी अब भी यदि अपने को पराधीन ही समझती है तो स्वराज्य आने से क्या फायदा हुआ? 'पराधीन सुख सपनेहु नाहीं' पराधीन लोग सुखी नहीं हो सकते। उन्हें सुखानुभूति कराने के लिए आजादी की अनुभूति कराना आवश्यक है। भूदान-ग्रामदान के जरिये हम वही काम कर रहे हैं। सर्वोदय के इस कार्यक्रम से गाँव-गाँव में लोग अपनी योजना बनायेंगे। मिल-जुल कर काम करेंगे। उन्हें अपनी शक्ति का भान होगा और आजादी का आनन्द आये बिना नहीं रहेगा।

हमारे यहाँ प्रेम से, करुणा से जमीन का मसला हल किया जा रहा है। इसे देखने के लिए दुनिया के कई देशों के लोग आते हैं। वे हमारे साथ यात्रा में रहते हैं। लोग भूदान और ग्रामदान देते हैं, इस बात को देख कर वे बहुत खुश होते हैं। फिर वापस अपने-अपने देश में जाकर इस बात पर महत्त्वपूर्ण लेख लिखते हैं। विदेशी लोग भारत में चलनेवाले इस आन्दोलन को बहुत ही आशाभरी नजरों से देखते हैं। आज भी हमारे साथ फ्रान्स और इजराइल के भाई आये हुए हैं। इन्हें आपके यहाँ पंजाब में कंजूसी देखने को मिलेगी या उदारता! आप जो दिखाना चाहेंगे, उसे ये लोग देखेंगे। इन्हें भारतीय संस्कृति का दर्शन करना है। आप भारतीय हैं। इसलिए अपना सर्वोत्तम रूप दिखाने के लिए आपको जाग जाना चाहिए।

आपके गुरुओं ने 'साझीवालता' की बात कही है। वह साझीवालता हमारे जीवन-व्यवहार में प्रकट होती है तो भारत के लिए एक गौरव की बात होगी। आप अपने गुरुओं की सीख पर अमल करें। यही आपसे हमारी प्रार्थना है।

♦♦♦

अनुक्रम

१. विज्ञान-युग में संस्कृति के आधार पर शिक्षा.... चंडीगढ़ १ मई '५९ पृष्ठ ४०५
२. पंजाब में ब्रह्म-विद्या ही चल सकती है कुचाना १६ अप्रैल '५९ ,, ४०८
३. गाँव का विकास ही राष्ट्र-निर्माण की बुनियाद है खनौरी-पक्खी ११ अप्रैल '५९ ,, ४०९
४. बिना सेवा के सत्ता नहीं टिकेगी, यह कांग्रेसवाले... बाणाटोंसा ७ मई '५९ ,, ४१०
५. जिसके साथ आचार का बल है, वही सच्चा विचार है बनूर २९ अप्रैल '५९ ,, ४११
६. उदारता भारतीय संस्कृति का गौरव है भांकरपुर ३० अप्रैल '५९ ,, ४१२

सच्ची कीमत

एक गाँव में किसानों के लड़के खेलते थे। एक लड़के को खेत में हीरे का पत्थर मिला। वह उससे खेलने लगा। दूसरे लड़के ने यह देखा। उसने उस पत्थर को मांगा। उस लड़के ने नहीं दिया तो वह रोते-रोते अपने बाप के पास गया और कहने लगा कि मुझे हीरा चाहिए। बाप ने पूछा: 'हीरा क्या चीज है?' बच्चे ने कहा: 'वह एक चमकीला पत्थर है। वह लड़का मुझे नहीं दे रहा है। मुझे वह चाहिए।' बाप उस लड़के के पास गया। हीरा मांगा, परन्तु उस लड़के ने नहीं दिया। वह किसान उस लड़के के बाप के पास पहुँचा और कहा कि मैं आपको पचास रुपये दूँगा। मुझे वह हीरा दिलवा दो। उस किसान ने ५० रुपये लेकर हीरा दे दिया। फिर वह दूसरे लड़के ने मांगा। उसके बाप ने ५०० रुपया देकर वह खरीदा। उसके पास से किसी ने दस हजार रुपये देकर खरीदा। इस तरह उसकी कीमत बढ़ी और धीरे-धीरे एक लाख रुपये हो गयी। परन्तु उसकी कीमत एक सेर चावल जितनी भी नहीं है। उस पत्थर से क्या उसका पेट भरेगा?

सच्चे श्रीमान तो वे लोग हैं जो अनाज, घी-दूध मक्खन आदि पैदा करते हैं।

♦♦♦

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन: १३९१ तार: 'सर्व-सेवा' वाराणसी।